International Journal of Applied Research 2018; 4(3): 162-163

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(3): 162-163
www.allresearchjournal.com
Received: 16-12-2017
Accepted: 17-02-2018

डॉ. रंजना ग्रेवर
सह–आचार्य (संगीत)
सी.एम.के. नेशनल पी.जी. गर्ल्ज कॉलेज, सिरसा, हरिद्वार, उत्तराखंड, भारत

Corresponding Author:
डॉ. रंजना ग्रेवर
सह–आचार्य (संगीत)
सी.एम.के. नेशनल पी.जी. गर्ल्ज कॉलेज, सिरसा, हरिद्वार, उत्तराखंड, भारत

होली गान का हिन्दोस्तानी संगीत मे प्रचलन

डॉ. रंजना ग्रेवर

सारांश
भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही धार्मिक एवं लौकिक कृत्यों, पर्वों एवं सामाजिक अनुष्ठानों पर अनसरानुकूल नृत्य, गान, अधिनियम, नाट्यादि के प्रदर्शन की प्रथा रही है। श्रृँगार और आन्दोलन के रूप में वँसतोत्सव एवं होली–क्रीड़ा का विशेष महत्व है। वसँत एवं होली के वर्ण्य–विषय को लेकर यूँ तो अनेक गेय विधाएँ विभिन्न–प्रान्तों के लोकसंगीत में प्रचलित हैं तथापि शास्त्रीय विधि से गाई जाने वाली प्रमुख विधाओं के रूप में 'होली धमार' एवं 'होली ठुमरी' या 'चाँचर' को होली गान के अन्तर्गत माना जाता है। अतः होली (होली धमार) और 'होली' (होली ठुमरी यास चाँचर) नामों से अभिहित की जाने वाली इन गेय विधाओं का सम्बन्ध भी मुख्य रूप से बसँत एवं होलिकोत्सव से ही सिद्ध होता है।

कूटशब्द : होली गान, वसंतोत्सव, विधा, होली क्रीड़ा, शास्त्रीय संगीत

प्रस्तावना
ऋतु सम्बन्धी यज्ञ विधानों में विविध सामों के गान का उल्लेख वैदिक वाड्मय में उपलब्ध होता है। वसँत ऋतु में स्थन्तर साम का गान अभीष्ठ था। वात्सयायन के अनुसार सुवसँतक, मदनोत्सव आदि सुअवसरों पर नृत्यगीतादि का आयोजन प्रत्येक नागरक के सामाजिक जीवन का अनिवार्य अंग था। पुराणों के साक्ष्य से प्रमाणित होता है कि मदनोस्तव चैत्र शुक्ल द्वादशी को आरम्भ होता था। चैत्र शुक्ल जयोदशी को नाना प्रकार के अश्लील गान भी गाए जाते थे और पूर्णिमा के दिन सार्वजनिक रूप से उत्सव मनाया जाता था।
प्राकृत–अपभ्रंश काव्य, संस्कृत साहित्य के प्राचीन काव्यों और नाटकों में भी मदन महोत्सव पर गीत–नृत्यादि के आयोजन का उल्लेख प्राप्त होता है। हर्ष कृत रत्नावली, दामोदर गुप्त कृत कुटटनीमनँ काव्य और राजशेखर की कर्पूर मँजरी में इस अवसर पर चर्चरी एवँ दँडराम के प्रदशन का उल्लेख है।
हिन्दुस्तानी संगीत के अन्तर्गत होली गान की प्रमुख विधाएं होरी धम एवं 'होली ठुमरी' अथवा 'चाँचर' से सम्बन्धित विभिन्न ऐतिहासिक तथ्यों के अन्वेषण एवँ अनुसंधान से प्रमाणित होता है कि इनकी विकास–श्रृंखला वसंतोत्सव में प्रदर्शित की जोन वाली 'चर्चरी' और 'धम्माली' जैसी श्रंगार परक नृत्य गान विधाओं से सम्बन्ध है।
'धमार' के अनुरूप धम्माली एवं 'चाँचल' अनुरूप चर्चरी, चच्चरी, चांचरि, चाँचर इत्यादि परक भेदों का उल्लेख विभिन्न संस्कृत ग्रन्थों, प्राकृत साहित्य, विभिन्न संगीत लक्षण ग्रन्थों तथा मध्यकाल साहित्य में मिलता है।
'चर्चरी' एवं 'धम्मली' का प्रदर्शन वसँतोत्सव, मदनमहोस्तव अथवा फल्यूत्सव का होली जैसे अवसरों पर किया जाना तथा वर्तमान 'होरी धमार' एवं 'होली चांचर' को भी वसंत अथवा विशेष रूप से होलिकोत्सव के आसपास गाया जाना इन दोनों के पारस्परिक तादात्म्य का सूचक है।
'चाँचर' के अनुरूप 'चच्चरी' प्रबंध का लक्षणयुक्त विवेचन मानसोल्लास, संगीतरत्नाकर, संगीत शिरोमणि, संगीतराज आदि प्राचीन एवं अन्य मध्यकालीन ग्रन्थों के उपलब्ध होता है। इन ग्रन्थों में वर्णित चच्चरी के लक्षणों के आधार पर स्पष्ट होता है कि चच्चरी के विभिन्न भेद प्रचलित थे और यह भिन्न–भिन्न तालों एवं छन्दों में गाई जाती थी।
'संगीत शिरोमणि' और 'संगीत राज' ग्रन्थों में चच्चरी के अतिरिक्त 'धम्माली' नामक गीत प्रबंध का भी लक्षण युक्त विवेचन मिलता है। इसे फाल्गुन ऋतु गये (फल्यूत्सव गेया) विधा माना गया है जिसमें एकलती और यतिताल का प्रयोग होता था।
कालक्रमानुसार चर्चरी (चच्चरी) और धम्माली की धाराँए तीन दिशाओं में प्रवाहित हुई – 1 वैष्णव मंदिरों एवं अन्य उपासना स्थलों यथा सूफियों की खानकाहों आदि में 2. लोक संगीत में धमार, धमाल, धुमाली, चाँचर, चाँचर इत्यादि गीत, ताल एवं नृत्य विधाओं के रूप में (3) राजदरबारों एवं

राज्याश्रयों में मध्यकालीन भक्त कवियों की वाणी में भी चाँचर, चाँचरि, फग, धमारी आदि विभिन्न गीत नृत्य एवं ताल प्रकारों का उल्लेख होली वर्णन युक्त पदों में मिलता है। मध्यकालीन विभिन्न सम्प्रदायों यथा वल्लभ, राधवल्लभ, हरिदासी, गौडीय एवं विम्बानों सम्प्रदायों के श्रीराधा कृष्णोपासक भक्त कवियों की रचनाओं में हुआ है। सूफी परम्परा में भी 'धमाल' व 'रंग' जैसी गेम विधाओं का चलन मिलता है। होरियों का प्रचार न केवल लोकजीवन एवं वैष्णवों के मंदिरों तक सीमित रहा, वरन् राज्यकार्यों एवं दरबारों में भी इस गान को प्रतिष्ठा प्राप्त हुई।

चर्चरी तृत्य एवं गान परम्परा के विकासात्मक क्रम का अध्ययन करने पर यह भी सिद्ध होता है कि चर्चरी प्राचीन रास संगीत की परम्परा का ही भेद था जिसकी विकास श्रँखला अत्यंत प्राचीन काल से कमशः रास, रासक एवं चर्चरी से होते हुए वर्तमान युग में धम्माली, धमाल, धामाली या धमार तथा ब्रज के चाँचरी गान तक चली आई और यही परंपरा आज भी ध्रुवपद अंग के 'होरी धमार' एवं ठुमरी अग के 'चाँचर' या 'होली ठुमरी' के रूप में हिन्दुस्तानी संगीत में विद्यमान है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. लक्ष्मीनारायण गर्ग, निबंध संगीत
2. डा. कमलेश सक्सेना, संगीत निकुंज
3. डॉ. रमाकांत द्विवेदी, उत्तर भारतीय शास्त्रीय गायन का ध्वन्यांकित अध्ययन
4. प्रो. हरीशचन्द्र श्रीवास्तव, राग परिचय भाग–4